International Journal of Applied Research 2019; 5(2): 288-290

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(2): 288-290
www.allresearchjournal.com
Received: 12-12-2018
Accepted: 15-02-2019

डॉ0 अशोक कुमार दुबे
एसोशिएट प्रोफेसर, संस्कृत, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, भारत

डॉ0 सान्त्वना द्विवेदी
सहायक आचार्य, संस्कृत, डीएवी पीजी कॉलेज, लखनऊ, भारत

Correspondence Author:
डॉ0 अशोक कुमार दुबे
एसोशिएट प्रोफेसर–संस्कृत बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, भारत

महाभारत में योग दिग्दर्शन

डॉ0 अशोक कुमार दुबे एवं डॉ0 सान्त्वना द्विवेदी

सारांश
युज् धातु से धञ् प्रत्यय लगाकर योग शब्द निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है–जोड़ना, नियुक्त करना, प्रयोग करना, सुव्यवस्थित करना आदि। निःसन्देह रूप से सांसारिक–दुःखानल से समस्त माव जाति चिरभिलषित शान्ति रूपी अमृत रूप का पान कराने में योग साधना आज भी सहज रूप में समर्थ है। योग–साधना की प्रक्रिया में यम–नियमों का पालन करने से चित्त निर्माण होता है।
''योगश्चित्तवृत्तिः निरोधः।''
महाभारत के अनेक स्थलों पर चित्तवृत्ति निरोध रूपी योग का वर्णन प्राप्त होता है। चित्त नियंत्रण की इस साधना पद्धति को योग, योग–साधना, अष्टांगयोग आदि नामों से अभिहित किया गया है।

कूटशब्द : योग दिग्दर्शन, सार्वभौम, मोक्षशास्त्र, उपनिषद् साहित्य आदि।

प्रस्तावनाः
योग सार्वभौम दर्शन है। जो प्राचीन काल से ही सर्वविदित एवं स्वतः सिद्ध है। सम्प्रति योग और भी अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक हो गया है। भारत में ही नहीं अपितु समग्र वैश्विक पटल पर योग के महत्व को स्वीकार किया जा रहा है तथा इस अतिविशिष्ट योग को 21 जून विश्व योग दिवस के रूप में प्रतिष्ठित भी किया गया है। जिससे सम्पूर्ण वैश्विक धरातल पर जन लाभान्वित हो सके तथा इसके ज्ञान से आकृष्ट हो सके। वस्तुतः योग वर्गनिष्ठ नहीं, अपितु व्यक्तिनिष्ठ साधन प्रणाली है। जो अभ्यास करने पर साधक के शरीर को निरोग व मन को शान्त बनाकर, उसे मानव–जीवन के चरम लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार तक पहुँचाती है।
आस्तिक षड्दर्शनों में सांख्य एवं योग का महत्व विश्व पटल पर उभर कर आता है–

''नास्ति सांख्यसमं ज्ञानं, नास्ति योगसमं बलम्''

योग के रहस्य और व्यावहारिक उपयोग को हृदयंगम कराने में शेषावतार महर्षि पतंजलि प्रणीत ''योगसूत्र'' को पर्याप्त लोकप्रियता प्रदान कर जनजीवन को योगदर्शन के सहयोग से समझने और जीवन में क्रियान्वित करने में व्यापक पृष्ठभूमि प्रस्तुत की। वैसे तो योग का उत्स हमें वेदों में प्राप्त होता है, लेकिन उपनिषद् साहित्य में भी इसका पर्याप्त चिन्तन दृष्टिगोचर होता है। उपनिषदों में मोक्षशास्त्र होने से इसमें आत्मा या ब्रह्मा के स्वरूप–विवेचन के साथ–साथ इसके साक्षात्कार के साधन रूप में योग को स्वीकृति मिली है। कठोपनिषद्, श्वेताश्वतरोपनिषद तथा मैत्रायणी उपनिषदों में सांगोपांग इसका विवेचन प्राप्त होता है।
निःसन्देह रूप से सांसारिक–दुःखानल से सन्तप्त मानवजाति को चिरभिलषित शान्ति रूपी अमृतरस का पान कराने में योग साधना आज भी सहज समर्थ है। योग–साधना की प्रक्रिया में यम–नियमों का पालन करने से चित्त निर्माण होता है। योगशास्त्र में वर्णित भी है कि–''योगश्चित्त वृत्ति निरोधः।।'' [1]
श्रीमद्भागवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि–इस योग नामक प्रक्रिया को दुःखों के संयोग (प्राप्ति) से वियोग कराने वाला समझाया है।

तं विद्याद्दुखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।। [2]

योग का अन्तिम लक्ष्य तो आत्मदर्शन ही है। 'याज्ञवल्क्यस्मृति' 1.8 में भी कहा गया है–''अयं तु परमो धर्मः यद्योगे–नात्मदर्शनम्।''
अर्थात् योगाभ्यास द्वारा आत्मदर्शन करना मानव–जीवन का परम धर्म है।

योग शब्द का अर्थ :–

युज् धातु से घञ्–प्रत्यय लगाकर योग शब्द निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है–जोड़ना, मिलना, सम्पन्न करना, प्रयोग करना, नियुक्त करना, सुव्यवस्थित करना इत्यादि। दिवादिगण युज् समाधौ का अर्थ है–नियुक्त करना, लगाना उदाहरणार्थ–मन को किसी ध्येय विषय पर केन्द्रित करना। 'अमरकोष' में योग शब्द के अनेक अर्थ दिये हैं–सन्नहनः उपायः, ध्यानम्, संगति, मुक्ति इत्यादि अर्थात् कवच धारण उपाय, किसी विशेष वस्तु अथवा व्यक्ति का ध्यान करना दो वस्तुओं का संयोग व कार्यसिद्धि में सहायक कोई युक्ति में सभी योग कहलाते हैं। [3]

इन सब रूढ़ अर्थों का मूल अर्थ है–दो पदार्थों का संयोग, मिलन, किसी अभीष्ट फलप्राप्ति के उद्देश्य से विविध कारणों का संयोग। यथा–दो औषधों का योग, योद्धा का कवच व शास्त्रास्त्रों से संयोग। ज्योतिष शास्त्रानुसार विशेष नक्षत्रों का विशेष वारों से योग होने पर विशिष्ट योग बनते हैं, जैसे–रविवार का हस्त नक्षत्र से सम्बन्ध होने पर सर्वार्थसिद्धियोग बनता है। पातंजल योगदर्शन के अनुसार–यम नियम, आसन, प्राणायाम प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये अष्टांग योग के रूप में विवेच्य हैं।

महाभारत के अनेक स्थलों पर चित्त वृत्ति निरोध रूपी योग का वर्णन प्राप्त होता है। चित्त नियंत्रण की इस साधना पद्धति को योग, योग साधना, अष्टाङ्योग आदि नामों से अभिहित किया गया है। अष्टाङ्ग योग के विषय में ऋषि युधिष्ठिर को कहते हैं हे राजन् आठ अंगों वाली (योग विषयक जिस बुद्धि को सभी अमंगलों का नाशक कहते हैं, तथा जो श्रुति व स्मृति के स्वाध्याय से दृढ़ की गई है, वह बुद्धि आप में स्थित है–

अष्टाङ्गबुद्धिमाहुर्या सर्वश्रेयोऽमधातिनीम्।
श्रुतिस्मृतिसमायुक्तं राजन् सा त्वय्यवस्थितो।। [4]

अष्टांगबुद्धि शब्द की व्याख्या करते हुए प्रसिद्ध टीकाकार ''नीलकण्ठ'' ने इसका अर्थ यम नयमादि आठ अंगों से युक्त योगसाधना किया है–

योगनिष्ठा ग्राह्यति।
यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यान।
समाधयोऽवष्टङ्गानि। [5]

इसी प्रकार अन्यत्र भी ब्रह्म के साथ तादात्म्य व चित्त को विलीनता का योग कहा गया है– तं विद्याद् ब्रह्मणो योगं दियोगं योगसंज्ञितत्। [6]

कुछ स्थलों पर ध्यान साधना को भी योग नाम से अभिहित किया गया है। परमेश्वर का निरन्तर चिन्तन व ध्यान करना अनन्तयोग–

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।। [7]

तथा अभ्यासयोग नाम से भी पुकारा गया है–

तथा अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थ! अनुचिन्तयन।। [8]

योग साधना में साधक साधना सम्बन्धी क्रियाएँ करके ही साधना पथ पर अग्रसर होता है, इसीलिए अनुगीतापूर्व में कहा गया है–योग का लक्षण है ''प्रवृत्ति'' व ज्ञान का लक्षण है–'संन्यास'।

''प्रवृत्तिलक्षणं योगो ज्ञानं संन्यासलक्षणम्।'' [9]

महाभारतकार महर्षि वेदव्यास कहते हैं कि इन्द्रियों पर नियंत्रण रखना ही सम्पूर्ण योग साधना का सार है–

''वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठता।'' [10]

तभी वह सुख–दुख, लाभ–हानि, जय–पराजय सभी स्थितियों को समान भाव से सहज कर सकता है। अतः समत्वबुद्धि को भी 'महाभारत' में 'योग' कहा गया है– 'सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।'' [12]

इस स्थिति की प्राप्ति हेतु साधक को अनासक्त भाव से निष्काम कर्म करना चाहिए। तभी वह कार्यों में सफलता मिलने पर प्रसन्न तथा असफलता मिलने पर दुःखी नहीं होता। वस्तुतः सुख–दुःख का भाव हमारे मानस पटल पर विद्यमान राग–द्वेष की भावना से समुत्पन्न होता है। जब हमें किसी प्रिय वस्तु की उपलब्धि होती है, तो सुख का तथा अप्रिय वस्तु की प्राप्ति पर दुःख की अनुभूति होती है। जब राग अथवा द्वेष की भावना से प्रेरित होकर सकाम भाव से कोई कार्य किया जाता है, तो शुभ कार्य का फल पुण्य के रूप में तथा पाप व कुत्सित कार्य का फल पापरूप में प्राप्त होता है, जिसे भोगने के लिए कर्त्ता बाध्य होता है। कर्मों के फल भोगने का बन्धन न रहें, इसी उद्देश्य से भगवान श्रीकृष्ण ने निष्काम भाव से कर्म करने का सुझाव दिया है। श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि–'समत्वबुद्धि युक्त पुरुष पाप व पुण्य दोनों को ही इस लोक में त्याग देता है। अतः हे अर्जुन! तुम इस समत्व बुद्धि की ही साधना करो, क्योंकि कर्मों को चतुराई पूर्वक सम्पन्न करना योग है–

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।। [13]

अभिप्राय यह है कि साधारणतया तो कर्मफल भोगने को कर्त्ता विवश है। वह कर्म फल से बँध जाता है। परन्तु कर्त्ता की निपुणता इसी में है कि वह कर्मबन्धन में न फंसे। यह तभी सम्भव है जब कर्म निष्काम होकर किये जाए। कर्म करने का यह चतुराईपूर्ण पद्धति अर्थात् निष्काम कर्म करना योग है।

अतः महाभारत में योग शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया गया है। महाभारत में उपलब्ध महत्त्वपूर्ण एवं विस्तृत योग–विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि महाभारत में अनेक योग–सिद्धान्तों का विवेचन पातंजल सूत्र के समकक्ष है, परन्तु कुछ सिद्धान्तों के विवेचन में, महाभारत पातंजलयोगसूत्र का भी अतिक्रमण कर गया है। कुछ सिद्धान्तों का प्रतिपादन योग सूत्र में पाया जाता है, परन्तु महाभारत उन विषयों पर मौन है। इसी प्रकार कतिपय योग विषयों का निरूपण महाभारत में उपलब्ध होता है, परन्तु पातंजल योग सूत्र में उनका उल्लेख नहीं है। किसी–किसी योग–सिद्धान्त के विवेचन में पतंजलि व महाभारत में वैचारिक समानता है, परन्तु महाभारत में उसे भिन्न शब्दों से परिभाषित किया गया है।

महाभारत में इन्द्रियनिग्रह समत्वबुद्धि, निष्काम कर्म के अर्थ में भी योग शब्द का प्रयोग किया जाता है, परन्तु महाभारत में उसे भिन्न शब्दों से परिभाषित किया गया है।

महाभारत में इन्द्रियनिग्रह समत्वबुद्धि, निष्काम कर्म के अर्थ में भी योग शब्द का प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त, महाभारत में अनेक स्थलों पर एकाग्र मन से किसी भी कार्य का अभ्यास करना भी योग कहा गया है। सत्य से धर्म की रक्षा होती है। योग से विद्या की रक्षा की जाती है। यहाँ पर योग शब्द का अभिप्राय अभ्यास से है। एक अन्य प्रसंग में भी योग शब्द का प्रयोग अभ्यास अर्थ में प्राप्त होता है। गुरु द्रोणाचार्य व अर्जुन की तुलना करते हुए कहा है–द्रोणाचार्य में सम्पूर्ण ज्ञान एक स्थान पर संचित है। परन्तु पाण्डव अर्जुन में अस्त्रों का ज्ञान व योग दोनों ही है।

''ज्ञानमेकस्थमाचार्ये ज्ञानं योगश्च पाण्डवे।'' [14]

इस प्रकार महाभारत में योग शब्द का प्रयोग संयोग, मिलन इत्यादि के अतिरिक्त भी उनके अर्थों में पाया जाता है। जैसे–चित्त की एकाग्रता, निष्काम कर्म, समत्व बुद्धि, ध्यान, अभ्यास आदि। परन्तु ऐसे स्थल विरल है व उंगलियों पर परिगणित किये जा सकते हैं। अधिकांशतः योग शब्द का प्रयोग अष्टांगयोग व तत्सम्बन्धी साधन के सन्दर्भ में किया गया है।

सन्दर्भ :

1. पातंजलयोगदर्शनम् / व्याख्याकारः स्वामी श्रीब्रह्मलीनमुनि / पृ0सं0 8
2. श्रीमद्भगवद्गीता / 6 / 28
3. अमरकोष / 3 / 3 / 22
4. महा0 / वन0 / 2 / 18
5. महा0 / नीलकण्ठ टीका / खण्ड–2 / पृ0 4
6. महा0 / वन0 / 213 / 33
7. महा0 / भीष्म0 / 36 / 3
8. महा0 / भीष्म0 / 32 / 8
9. महा0 / आश्वमेवं / 43 / 26
10. महा0 / भीष्म0 / 26 / 61
11. वही 48
12. भगवद्0 / 8 / 5
13. महा0 / प्रो0 / 188 / 45